THE ECONOMIC TIMES

Date: 04-11-26

Stop the Price Scam In Our Hospitals

ET Editorials



Most patients in India have virtually no say in their medical treatments. Yet, they shoulder the entire financial burden, frequently paying prices vastly disconnected from actual wholesale costs. A recent Maharashtra FDA survey across the Mumbai Metropolitan Region, Pune and Chhatrapati Sambhajinagar revealed staggering price inflation. An IV infusion set bought for 11.05 was billed at an MRP of 325; a 6.75 syringe was listed at 57.20; and a 29.41 catheter cost 310. Uncovering markups as high as 2,841%, the regulator requested guidelines from National Pharmaceutical Pricing Authority (NPPA) on acceptable price gaps.

In 2018, an NPPA review of hospital bills found that consumables made up nearly 1/10th of total patient costs, more than double the expenditure on scheduled essential drugs. NPPA flagged profit margins on non-scheduled items like cannulae and catheters as exorbitant, noting that in-house hospital pharmacies trapped patients without alternatives. Crucially, it acknowledged that such medical disposables fell outside its price-control mandate. After the FDA report, Association of Indian Medical Device Industry (AiMeD) said the findings highlighted the need for a separate pricing policy for medical devices.

The core issue isn't producing another report confirming that medical supplies are overpriced. It is actionable intervention. Instead of relying on sporadic media exposés, or isolated state- level surveys, the government should establish an independent regulator to systematically sample hospital bills across regi-ons and procedures. This body would compare procurement costs against billed MRPs, highlight egregious outliers, publish anonymised data, and separate legitimate operational overheads from predatory markups.

दैनिक भास्कर

Date: 04-11-26

शिक्षा - स्वास्थ्य के लिए उच्च गुणवत्ता वाली सेवाएं जरूरी

संपादकीय

विश्व बैंक की ताजा पावर्टी एंड इक्विटी ब्रीफ रिपोर्ट में भारत में तेजी से गरीबी कम होना खुशी का बात है। लेकिन रिपोर्ट का एक अंश चिंताजनक भी है। इसके अनुसार यूपी-बंगाल पट्टी (झारखण्ड और बिहार समेत) का देश की आबादी में हिस्सा तो 35% है, लेकिन 57% गरीब भी इन्हीं चार राज्यों में हैं। इसके उलट अगर चार प्रमुख औद्योगिक राज्यों गुजरात, महाराष्ट्र तमिलनाडु और कर्नाटक को लें तो नीति आयोग और एनएसओ के उपभोक्ता खर्च के आधार पर उनमें देश की कुल आबादी का 24% है, लेकिन गरीब मात्र 15% हैं। समय के साथ गरीबी महज उपभोक्ता खर्च से नहीं मापी जा सकती। 1967 तक भारत में अनाज सबसे बड़ी जरूरत थी, लेकिन आज व्यक्ति की जरूरत मात्र पेट भरना नहीं है। उसे बच्चों के लिए बेहतर शिक्षा की भी दरकार है, जो उसे उत्पादक नौकरी दिला सके। उसे ऐसी स्वास्थ्य सेवा की जरूरत है, जो महंगे इलाज से बचा सके। पांच किलो मुफ्त अनाज भूख से मौतें तो बचा सकता है, पर रोजगारपरक शिक्षा सुनिश्चित नहीं कर सकता। तब बच्चे स्कूल-कॉलेज छोड़ युवा आयु में गिग वर्कर बनने को मजबूर होंगे। खोमचे-ठेला लगाकर परिवार का पेट भरना मुमकिन है, पर अच्छी शिक्षा और बेहतर स्वास्थ्य पाना नहीं समाज के लिए सबसे जरूरी लेकिन लगातार महंगी होती इन सेवाओं से उदारीकरण के बाद से सरकारों ने हाथ खींचने शुरू किए हैं। नतीजतन शिक्षा और स्वास्थ्य महंगे होते चले गए हैं। सबके विकास के लिए शिक्षा स्वास्थ्य के लिए उच्च गुणवत्ता वाली सेवाएं जरूरी हैं।

Date: 04-11-26

अगर बच्चों में भी क्रूरता भरने लगे तो हमारे उजले भविष्य का क्या होगा?

मेघना पंत, (पुरस्कृत लेखिका, पत्रकार और वक्ता)

कुछ वीडियो ऐसे होते हैं, जिन्हें देखने के बाद मन करता है कि काश उन्हें देखा ही न होता। इसलिए नहीं कि उनमें वीभत्स दृश्य होते हैं, बल्कि इसलिए कि वे एक विचलित करने वाली सच्चाई को उजागर करते हैं। यह कि हम किस हद तक क्रूरता को सामान्य मानने लगे हैं।

एक गरीब, मासूम, छह साल की बच्ची- जो स्पेशली-एबल्ड भी थी- पर महज आठ साल के लड़के का हमला ऐसी ही भयावह घटना है। इसने पूरे देश को झकझोर दिया। इससे कई सवाल उठे हैं। पंचकूला के उस स्कूल में निगरानी की व्यवस्था कैसी थी, जहां बच्ची पर इतने बेखौफ होकर हमला किया गया? शिक्षक कहां थे? बच्ची इतनी असुरक्षित स्थिति में कैसे पहुंची? और हम अपने बच्चों को संवेदनशीलता, आक्रामकता व दूसरे मनुष्य के जीवन के महत्व के बारे में क्या सिखा रहे हैं?

हमें ये असहज सवाल पूछने ही होंगे, खासकर इसलिए कि अपराध करने वाला भी अभी खुद एक बच्चा ही है। आखिर इस बच्चे ने अपने घर में क्या देखा है? स्कूल में क्या देखा है? समाज में क्या देखा है? मीडिया और सोशल मीडिया पर क्या देखा है? वह किस तरह के व्यवहारों के संपर्क में रहा है? हिंसा, सहमति, करुणा और अपने कृत्यों के परिणामों को लेकर उसकी समझ किस तरह गढ़ी जा रही है? बच्चे किसी शून्य में बड़े नहीं हो जाते। उनके व्यवहार पर उनके परिवेश, अनुभवों और उनकी परवरिश का प्रभाव पड़ता है।

इसके बाद किशोर-न्याय का और भी कठिन सवाल सामने आता है। कानून मानता है कि बच्चे वयस्कों से अलग होते हैं और किशोर-न्याय में उनके पुनर्वास को केंद्रीय महत्व मिलना चाहिए। लेकिन पुनर्वास का मतलब उदासीनता नहीं हो सकता। इसका मतलब यह भी नहीं हो सकता कि पीड़ित के कष्टों को गौण मान लिया जाए।

अगर कोई आठ साल की उम्र में इतना जघन्य अपराध कर सकता है, तो वयस्क होकर क्या करेगा? मनोरोगी प्रवृत्ति वालों के कृत्यों को केवल इसलिए बर्दाश्त नहीं किया जा सकता कि हमारी न्याय-व्यवस्था उन्हें अवयस्क समझती है। इस मामले में कानून और नैतिकता के दायरे में जवाबदेही तय होनी चाहिए, मनोवैज्ञानिक आकलन किया जाना चाहिए और अपराध की गंभीरता के अनुरूप सजा मिलनी चाहिए। व्यवस्था को कड़ा संदेश देना होगा कि अगर अपराध करोगे, तो उसकी सजा भी भुगतनी होगी- ताकि कोई बच्चा दोबारा किसी दूसरे बच्चे के साथ ऐसा करने की हिम्मत न करे।

शायद इस घटना का सबसे निराशाजनक पहलू वह है, जो सोशल मीडिया पर टिप्पणियों में हो रहा है। लोग इसमें राजनीति घसीट रहे हैं। कुछ लोग धार्मिक संकेतों के जरिए यह जताने की कोशिश कर रहे हैं कि हिंसा का संबंध पीड़ित बच्ची की सामुदायिक-पहचान से है। एक छह साल की बच्ची की जान जाते-जाते बची है और हमारी पहली प्रतिक्रिया उसकी पीड़ा को अपने राजनीतिक पूर्वग्रहों के लिए हथियार बनाने की होती है? सचमुच?

यह किसी सुविधाजनक खलनायक या पीड़ित को खोजने का मामला नहीं है। यह एक कहीं बड़ी विफलता का सामना करने का सवाल है- संवेदनशीलता सिखाने में विफलता, बच्चों की निगरानी करने में विफलता, कमजोरों की रक्षा करने में विफलता और इस बात को पहचानने में विफलता कि क्रूरता को कभी सामान्य नहीं बनने देना चाहिए। हम बार-बार कहते हैं कि बच्चे भविष्य हैं। पर हम कैसा भविष्य बना रहे हैं, अगर हम वर्तमान में ही उनकी सुरक्षा सुनिश्चित नहीं कर सकते?

एक छह साल की बच्ची को खिलौनों, स्कूल, जन्मदिन की पार्टियों की चिंता होनी चाहिए। इस बात की नहीं कि कोई दूसरा बच्चा उसकी जान लेने की कोशिश करेगा या नहीं!

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 04-11-26

गुस्से से क्यों बेकाबू होने लगे छोटे-छोटे बच्चे

क्षमा शर्मा, (वरिष्ठ पत्रकार)



पंचकुला के एक स्कूल में नौ साल के एक बच्चे ने छह साल की बच्ची को जिस तरह ईंट से बार-बार मारा, वह हैरतअंगेज है। बच्ची 'केजी' में पढ़ती है। गंभीर हालत में उसे अस्पताल में दाखिल कराया गया। डॉक्टरों के अनुसार, उसकी हालत में कुछ सुधार हुआ है और वह अब खतरे से बाहर आ चुकी है। कहा जा रहा है बच्ची ने बच्चे को पागल कह दिया था, इसलिए वह गुस्सा हो गया।

एक नौ साल के बच्चे में आखिर इतना गुस्सा कैसे, क्यों? बहुत से लोग कह रहे हैं कि बच्चे का मानसिक इलाज कराया जाए। सच बात है, एक नौ साल के बच्चे को इतना क्रोध आए कि वह दूसरे की जान लेने पर ही तुल जाए, तो यह कोई साधारण बात नहीं है। अब उसकी काउंसलिंग भी होगी। इसके अलावा, बच्चे के घर के परिवेश की जांच भी जरूरी है। आखिर बच्चे ने ऐसा कहां से सीखा? क्या घर में इस बच्चे के सामने माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों के बीच रोज लड़ाई-झगड़ा और मारपीट होती थी? क्या यह बच्चा सोशल मीडिया पर हिंसा से भरे कार्यक्रम अधिक देखता था? बताया जा रहा है कि बच्चा मोबाइल फोन के इस्तेमाल का आदी है। अगर ऐसा है, तो घर वालों ने इस ओर ध्यान क्यों नहीं दिया? क्या पहले भी इस बच्चे ने स्कूल में इसी तरह का हिंसक व्यवहार किया था? यदि हां, तो क्या स्कूल के शिक्षकों ने इस पर ध्यान दिया? घर वालों से इसकी शिकायत की?

जिस बच्ची पर आरोपी बच्चे ने हमला किया, वह शायद जल्द ठीक हो जाए, पर अब खुद हमलावर बच्चे के सामने कई मुश्किलें पेश आ सकती हैं। फिलहाल उसे बाल सुधार गृह भेज दिया गया है, जहां विशेषज्ञ और बाल मनोवैज्ञानिक उसकी मानसिक दशा का आकलन कर रहे हैं। अंतिम कानूनी कदम उसकी इसी जांच-पड़ताल पर निर्भर करेगा। फिलहाल वह किसी सामान्य स्कूल में नहीं पढ़ रहा, बल्कि किशोर न्याय बोर्ड के निर्देशानुसार सुरक्षित देख-रेख में रखा गया है, पर भविष्य में उसकी सामाजिक स्वीकार्यता प्रभावित हो सकती है, क्योंकि उसके बारे में अधिकांश लोगों को पता चल गया होगा। ऐसे में, उसका आगे क्या होगा, यह एक बड़ा सवाल है।

वैसे, इस घटना से जुड़े कुछ अन्य सवाल भी हैं, जिनके जवाब धीरे-धीरे, वक्त के साथ मिलेंगे। हरियाणा के शिक्षा विभाग ने प्राचार्य और दो अध्यापिकाओं को निलंबित कर दिया है, लेकिन यह घटना बेहद डरावनी है। माता-पिता

पढ़ाई-लिखाई के लिए स्कूलों में अपने बच्चे को भेजते हैं और वहीं अगर उनकी सुरक्षा की कोई गारंटी नहीं, तो बच्चे कहां जाएंगे, कैसे पढ़ेंगे?

एक दुखद तथ्य यह भी है कि इन दिनों बच्चों का व्यवहार बहुत अहंकार से भरा दिखता है। उनके ऐसे व्यवहार को देख घर वाले अक्सर उनकी आलोचना नहीं करते, बल्कि इसे अपने बच्चे का नैसर्गिक गुण समझते हैं। इसकी एक वजह बाजार भी है। इसने अलग-अलग उत्पादों को बेचने के लिए अहंकार जैसे नकारात्मक मूल्य को विशेषता बताया है। यदि आपके पास किसी खास ब्रांड का फोन है, गाड़ी है, घर है, हवाई यात्रा के लिए फर्स्ट और बिजनेस क्लास का टिकट है, हीरे, जूते, चप्पल, गहने, कपड़े, गाड़ी, मोबाइल आदि हैं, तो आप दूसरों से अलग हैं, विशेष हैं, 'एटीट्यूड' वाले हैं। महान हैं। जिसके पास ये सामान नहीं, वे आपसे कमतर हैं। छोटे हैं। सोशल मीडिया और तमाम विज्ञापन इस तरह की भावना को रोज बढ़ाते हैं। बच्चे भी इनसे खूब प्रभावित होते हैं। वे अपने साथियों के साथ स्कूल में इसी तरह का ऊंच-नीच व्यवहार करते हैं। यही बात हिंसा के मामले में है। यदि हिंसा को लगातार दिखाया जाए, तो जिसके प्रति हिंसा हुई, उसके प्रति हमारी संवेदनशीलता खत्म हो जाती है। हिंसा भी हमें रोजमर्रा की बात लगने लगती है।

कुछ साल पहले अमेरिका के कैलिफोर्निया राज्य में पांच साल के एक बच्चे ने अपने जुड़वां भाई को चाकू मार दिया था। वहां स्कूलों में बच्चों द्वारा गोलीबारी की खबरें आम हैं। अब अपने भी देश के स्कूलों में भी ऐसी ही घटनाएं होने लगें, तो न केवल माता-पिता, अध्यापक, स्कूल इस बारे में गंभीरता से सोचें, बल्कि नीति-निर्माता, राजनेता, तमाम एजेंसियां भी इस ओर जल्दी ध्यान दें। अपने बच्चों को इस तरह से अरक्षित तो नहीं ही छोड़ा जा सकता।